(IIJIF) Impact Factor- 5.172

Regd. No. : 1687-2006-2007 **ISSN 0974 - 7648**

J I G Y A S A

AN INTERDISCIPLINARY PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Chief Editor : ***Indukant Dixit***

Executive Editor : ***Shashi Bhushan Poddar***

Editor
Reeta Yadav

Volume 15 **June 2022** **No. II**

Published by
PODDAR FOUNDATION
Taranagar Colony
Chhittupur, BHU, Varanasi
www.jigyasabhu.com
E-mail : jigyasabhu@gmail.com
Mob. 9415390515, 0542 2366370

स्वामी सहजानन्द की अनुभूतियाँ एवं संघर्ष तथा वर्तमान का जागृत राष्ट्रवाद

*सुबाष चन्द्र यादव**
*डॉ. कृष्णा नन्द चतुर्वेदी***

स्वामी सहजानन्द सन्यासी थे। धार्मिक बातों में उनकी गहरी रूचि थी। सामाजिक बातों की तरफ उनकी प्रवृत्ति नहीं थी। प्रारम्भ में वे सामाजिक कार्य के महत्व और उसकी असलियत को समझ नही सके थे। बाद के दिनो में उनके जीवन में घटित घटनाओं ने उनकी महत्ता, उसकी अहमियत, उसकी कर्तव्यता को उनके मानस पटल पर अंकित कर दिया।[1] *ऐसी अनेकानेक अनुभूतियों ने स्वामी सहजानन्द को सामाजिक कार्य करने के लिए विवश कर दिया। स्वामी जी के जीवन की इन अनुभूतियों का वर्तमान की सामाजिक व्यवस्थाओं की चुनौतियों से निबटने में प्रयोग किया जा सकता है। प्रस्तुत शोध निबन्ध सामाजिक, राजनीतिक नेतृत्व को दिशा प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो सकता है।*

स्वामी जी ने श्रीमद्भागवत में भगवान नरसिंह और भक्त प्रहलाद के प्रसंग में एक श्लोक पढ़ा। इस श्लोक ने उनकी अनुभूतियों को व्यापक बनाया–

''प्रायेण देव मुनयः स्वविमुक्ति कामा
मौनं चरन्ति विजने न परार्थ निष्ठाः।
नैतानविहाय कृपणान विमुभुक्ष एको
नान्यत्वदस्य शरणं भ्रमतोSनुपरये।

इस श्लोक का सारांश यह है कि–ऋषि मुनि तो स्वार्थी बनकर अपनी ही मुक्ति के लिए एकांतवास करते हैं। उन्हें औरों की चिन्ता नहीं होती। लेकिन मैं तो कदापि ऐसा नही कर सकता। सभी दुखियों को छोड़कर मुझे केवल अपनी मुक्ति नही चाहिये। इन सभी बातों का स्वामी जी के दिल–दिमाग पर गहरा असर पड़ा। उन्होंने सामाजिक कार्य करने के लिए मन में ठान लिया। स्वामी जी समझते थे कि परोपकार सत्कर्म है, पुण्य का कार्य है, किन्तु अपकार दुष्कर्म है, पाप का कार्य है।[2]

प्रारम्भ में उनका उद्देश्य शास्त्राध्ययन और योगाभ्यास था लेकिन जब वे देश के भिन्न–भिन्न स्थानों में भ्रमण करने लगे तब उन्हें सामान्य जनता की दुरवस्था देखने को मिली। सामान्य जनता पर होने वाले

---

* शोधार्थी, महात्मा गांधी सती स्मारक महाविद्यालय, गाजीपुर
** शोध निर्देशक, एसोसिएट प्रोफेसर राजनीति शास्त्र, स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय

अत्याचारों और अन्यायों के विषय में करूण कहानियों को सुना। अब धीरे–धीरे उनके विचारों में परिवर्तन आने लगा।[3] स्वामी जी का सिद्धान्त था 'न दैन्यं न पलायनम्'। स्वामी सहजानन्द सरस्वती को संसार और संसारिकता से कोई भय नही था। अतः उन्होंने सन्यास को ग्रहण कर निजी मुक्ति के लिए पहाड़ और जंगल की शरण नही ली। न तो वे किसी मठ या मन्दिर में गये। वे समाज की तरफ उन्मुख हुए। उन्होंने समाज में रहकर समाज की सेवा करने के लिए निश्चय किया। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' उनके जीवन का लक्ष्य बन गया। वे जीवन भर अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध संघर्ष करते रहे, चाहे वे किसी व्यक्ति विशेष की ओर से होते हो चाहें किसी जाति विशेष की ओर से होते रहे या किसी राष्ट्र की हो ओर से होते हों। इस संघर्ष में उन्हें अनेकों कष्टों और कठिनाईयों का सामना करना पड़ा और अनेक दुःख दर्दों को सहना पड़ा।[4] काशी प्रवास तक स्वामी जी में धार्मिक कट्टरता थी, वे छुआछूत को मानते थे।[5] प्रारम्भ में स्वामी सहजानन्द सरस्वती की सोच भूमिहार–ब्राह्मण समाज का उद्धार करना था।[6] यहीं से उन्होंने समाजसेवा का श्रीगणेश किया। यद्यपि जाति उद्धार का यह कार्य स्थापित सच्चा धर्म के प्रतिकूल था। 1915 ई0 के उद्धरार्ध में वे दरभंगा, भागलपुर, मुंगेर आदि जिलों में गये, सामाजिक कारकों की पहचान करते हुए उन्होंने लगभग 400 पृष्ठों की 'भूमिहार ब्राहमण परिचय'' नामक पुस्तक लिखी जो 1916 ई0 में प्रकाशित हुई। गाजीपुर जिला में करीमुद्दीनपुर थाना के अन्तर्गत विश्वम्भरपुर में स्वामी जी का आश्रम था। इस क्षेत्र में घटित हुई घटनाओं ने उनके अन्तस को झकझोर कर रख दिया। तिर्हुत प्रमण्डल के मुजफ्फरपुर, दरभंगा आदि जिलों एवं हजारीबाग के चतरा डिवीजन के इटखोरी क्षेत्रों का उन्होंने अनेकों बार भ्रमण किया।

15 जनवरी 1934 ई0 को बिहार में भयंकर भूकम्प आया। बहुत भीषण क्षति हुई थी। अन्न की बर्बादी हुई थी। लोग दाने–दाने के मुहताज थे। ऐसी स्थिति में जमींदार जनता या किसानो के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार करते थे। लगान वसूली न होने की स्थिति में लोगों के लोटा, थाली, माल, मवेशी आदि ले जाते थे। अन्य नेताओ की तरह स्वामी जी भी जनता को मदद देने में लग गये। बिहार के बिहटा में उन्हों चन्दा (धन) वसूल किया। घर और झोपड़ी को बनाने के लिए लकड़ी, बाँस फूस आदि की व्यवस्था करायी। स्वामी के इन कार्यों के विरूद्ध जमींदार प्रायः शोर गुल करने लगे।[7] चीनी मिले खराब हो चुकी थी, किसानों की ईख खेतों में पड़ी हुई थी। स्वामी सहजानन्द जी ने बिहटा में गुड़ बनाने के लिए अच्छी और सस्ती कल बनाने की व्यवस्था करायी। भूकम्प के बाद ब्रिटिश सरकार ने सभा या जूलूस प्रतिबन्धित कर दिया था। स्वामी जी अपने कार्यकर्ताओं की

सभा बुलाकर उनसे कुछ सहायता लेना चाहते थे। गांधी जी से इस सन्दर्भ में उनकी अनेक वार्ताएं हुयीं, किन्तु मदद न मिलने से स्वामी जी ने उनसे सम्बन्ध तोड़ दिया। संघर्ष से अनुभूतियाँ प्राप्त होती है और निरन्तर संघर्ष इनको समृद्ध करता रहता है। संघर्षोत्पन अनुभूतियाँ किसी की पथगामिनी बने ऐसा जरूरी नही है। आत्ममंथन के गम्भीर क्षणों में अनुभूतियाँ मूल्यों एवं व्यवस्थाओं के संदर्भ में आत्मावलोकन करती प्रतीत होने लगती है। स्वामी सहजानन्द के सन्दर्भ में आत्मावलोकन करती प्रतीत होने लगती है। स्वामी सहजानन्द सरस्वती को 1922 ई0 लखनऊ जेल में रखा गया। जेल में ही उन्हें पण्डित जवाहरलाल नेहरू से विशेष बातचीत और परिचय का अवसर मिला। स्वामी सहजानन्द जी ने मेरा संघर्ष में लिखा है कि 'राजनीति में नेताओं का बेतकल्लुफ और बाहरी दिखावे से अलग रहना' लगभग कम सा हो गया है। यह हमारी राजनीति की बड़ी भारी कमी है। जनसाधारण का और साधारण कार्यकर्ताओं का, जो असल में सब कुछ करने वाले होते हैं, हृदय कभी जीता नही जा सकता बिना इसी सादगी और दिखाऊपन के अभाव के/अमीरी तो हमारी राजनीति के लिए प्लेग है।''[8]

जेल प्रवास के दौरान सहजानन्द सरस्वती को एक अन्य मूल्यगत अनुभूति भी हुयी। उन्होंने लखनऊ जेल जीवन को नजदीक से देखा, जिया और इस नतीजे पर पहुँचे कि, 'राजनीति को नैतिक रूप (Religious & Moral) देकर इतनी जल्दी जो गांधी जी ने इसे सार्वजनिक बना दिया, वह बड़ी गलती हुई। यदि इसे ठीक–ठीक ले चलना है तो अब तक का बना बनाया सारा महल गिरा देना होगा। सिर्फ नींव रखनी होगी, उसी पर फिर राजनीति का महल खड़ा हो सकता है। नही तो यह आन्दोलन कोरी राजनीति, दूषित राजनीति के सिवाय और कुछ रह न जायेगा। हमारी राष्ट्रीयता केवल जबान पर है। हममें जाति–पाति की बात इतनी ज्यादा घर कर गयी है जो अभी दर्द दे रही है। ऐसी दशा में राजनीति को नैतिक बनाना तो सपने की चीज है।''[9]

संदर्भ 8 में वर्णित स्वामी जी की अनुभूति को आज के सामाजिक, राजनीतिक पुनर्जीवन में विश्लेषित किया जाय तो ऐसा लगता है कि आज का दलगत प्रारूप, राजनेताओं की जीवन चर्या दिखावाा एवं आडम्बर से ओत प्रोत हो चुका है। आज राजनीति में साधारण कार्यकर्ता रहा ही नही, जो हैं वे विशिष्ट हैं, अभिजन हैं, उनकी वृत्ति पेशेवर है, ''गरीबी राजनेताओं के लिए अभिशाप है, प्लेग है।'' पहनने वाली पोशाक, वाहन, जन सेवा में निकलने वाला काफिला आदि–आदि। सब कुछ वैशिष्ट्य प्राप्त कर चुका है। तो क्या स्वामी जी की अनुभूति के प्रयोग से आज का राजनेता जनता का हृदय जीत सकता है?[10] कदापि नहीं। यद्यपि स्वतन्त्र भारत में पं0 दीनदयाल उपाध्याय, राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण, अटल बिहारी बाजपेयी सहित अन्ना हजारे (प्रसिद्ध समाजसेवी) आदि कई अन्य, साधारण

जीवन शैली के साथ–साथ जन हृदय अनुरागी आदर्श व्यतीत करने वाले लोग उभरे किन्तु राजनीतिक चकाचौंध ने सादगी एवं सरल राजनीति को ढ़क लिया है।

भारतीय राजनीति के विमर्श में आज 'राष्ट्रवाद' अत्यन्त प्रखर विमर्श बना हुआ है। तेरा राष्ट्रवाद, मेरा राष्ट्रवाद या सनातन राष्ट्रवाद चहुँओर छाया हुआ है। इस संदर्भ में स्वामी सहजानन्द सरस्वती के (संदर्भ–9 का उपकथन) अनुभवों को अवलोकित करने का समय आ गया है और किचिंत मात्र का आशानुरागी राष्ट्रवादी के लिए यह पथ विपश्यना सिद्ध हो सकती है। ''राजनीतिक नैतिकता'' संसद या प्रेसवार्ता के लिए अच्छी हो सकती है किन्तु भारतीय राजनीतिक जीवन में इसकी छवि मंद पड़ती जा रही है। आज राष्ट्रवाद को ऐतिहासिकता के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है। (भारत में नई संसद के निर्माण एवं सेन्गोल की स्थापना पर उभरने वाला विमर्श) राष्ट्र जीवन को नये आयाम से जोड़ा जा रहा है किन्तु भारत का सामाजिक जीवन अभी भी जाति–पाँति, अमीर–गरीब में बंटा हुआ है। वोट के चक्कर में सामाजिक जीवन के इस स्वरूप को बार–बार कुरेदा जा रहा है।

ऐसे परिवेश में सुधार एवं विकास अर्थहीन होता जा रहा है। प्रेसवार्ता करने, रैलियाँ करने या संसद में बहस कर देने मात्र से जन आन्दोलन नही हो सकते या इनमें किंचित परिवर्तन हो नही सकता। इस स्तर पर यह चयनवादी अवश्य हो सकता है जो कुछ चुने हुए लोगों में परिवर्तन कर सकता है। यही कारण है कि आज भारत में जन आन्दोलन प्रायः मृत अवस्था की ओर तेजी से बढ़ रहा है। भारत में संसद का स्वरूप चयनात्मक प्रतिनिधित्व बनकर रह गया है।[11]

आज सत्य, अहिंसा और सदाचार तथा जनसेवा का नारा तो बुलंद किया जाता है किन्तु दम्भ, हिंसा, असत्य और प्रवंचना फैलाई जा रही है। चुनाव एंव केवल चुनाव भारतीय राजनीति का केन्द्र बिन्दु बन चुका है। अनुभव, व्यवहार कुशलता एवं कर्मठता की जगह चाटुकारिता एवं गणेश परिक्रमा ने ली है।

स्वामी सहजानन्द के जीवन संघर्षों की अनुभूतियाँ यह सिखाती हैं कि, राजनीतिक जीवन का रास्ता समाज के गहरे–छिछले, टेढ़े–मेढ़े रास्ते से होकर निकलता है। कोई व्यक्ति न तो इससे अन्मनस्क रह सकता है और न इससे दूर। 'हम' है तो समाज है, उसका स्तर है, उसका सामूहिक जीवन है, हमारा राष्ट्र है। हम इससे विलग रहकर 'वयं राष्ट्रे संगमनी' या 'वयं राष्ट्रे जागृयाम्' की सोच भी नही सकते। एक विकसित राष्ट्र या जीवन की कल्पना तो मात्र कोरी सिद्ध होगी। हाँ, राजनीति में उन्माद अवश्य पैदा किया जा सकता है और आज भरपूर प्रयास भी हो रहा है। सुधी विवेचक इसके स्थायी एवं परिपक्व समाधान के लिए प्रयत्नशील रहते है और यही

हमारा राष्ट्र धर्म भी है। उम्मीद है इस आधार को पहचान कर आज हम हमारे भारत की अन्याय राजनीतिक समस्याओं का त्वरित हल ढूढ़ पायेंगे।

सन्दर्भ :

1. स्वामी सहजाननद सरस्वती 2000 'मेरा जीवन संघर्ष' श्री सीताराम आश्रम ट्रस्ट प्रकाशन, बिहरा पटना (बिहार), जून 2000 ई0 पृष्ठ–163
2. वैद्यनाथ पांडेय 'स्वामी सहजानन्द सरस्वती व्यक्तित्व एवं कृतित्व' 1997 सेन्चुरी प्रिन्टर्स, किताब महल, इलाहाबाद 1997 पृष्ठ–29
3. सन्दर्भ–2, पृष्ठ–20
4. सन्दर्भ–3 की भांति, पृष्ठ–22
5. राय, डा0 श्याम बिहारी 1989 'स्वामी सहजानन्द सरस्वती का राष्ट्रीय आन्दोलन में ऐतहासिक योगदान, निवेदिता, गाजीपुर 1989, पृष्ठ–60
6. सन्दर्भ–1 पृष्ठ–169
7. सन्दर्भ–1 पृष्ठ–41
8. देखे सन्दर्भ–1 की भांति, पृष्ठ–116
9. देखे सन्दर्भ–1 पृष्ठ–120
10. डा0 रेणु कुमारी, 1993 स्वामी सहजानन्द सरस्वती और बिहार का किसाान सभा आन्दोलन किताब महल, मुजफ्फरपुर 1993
11. चतुर्वेदी, डा0 कृष्णा नन्द (2009), ''भारत में केन्द्रीय स्तर पर गठबन्धन सरकारें''क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, (2009) नई दिल्ली।
12. जवाहर लाल नेहरू 'हिन्दुस्तान की समस्याऐं' नई दिल्ली, 1950
13. बनर्जी, ए0सी0, 'हिस्ट्री ऑफ माडर्न इंण्डिया, कलकत्ता, 1979

***